Dr. Vandana Suman
Associate professor
Dept. of Philosophy
H. D. Jain College, Ara
M. A Semester - 1 Philosophy CC-04
Indian and Western Ethics

1. "Ethical Implication of Law of Karma"

FEBRUARY '20	MARCH '20
M T W T F S S	M T W T F S S
1 2	30 31 1
3 4 5 6 7 8 9	2 3 4 5 6 7 8
10 11 12 13 14 15 16	9 10 11 12 13 14 15
17 18 19 20 21 22 23	16 17 18 19 20 21 22
24 25 26 27 28 29	23 24 25 26 27 28 29

APPOINTMENTS / MEETINGS

" कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूमा ते संङ्गोस्त्व कर्मणि ।।"

'कर्मयोग' गीता का सबसे महत्वपूर्ण विषय है। 'निष्काम कर्म' ही गीता में 'कर्मयोग' कहा गया है। इसका उपदेश करते हुए भगवान अर्जुन से कहते हैं कि "तेरा कर्म करने में ही अधिकार है उसके फलों में कभी नहीं इसलिए तू कर्मों के फल का हेतु न हो तथा तेरी उसमें आसक्ति भी न हो।" स्वाभाविक रूप से सभी अवस्थाओं में सभी कार्यों का उक्त रीति से अनुष्ठान करना ही वास्तविक 'कर्मयोग' है। कर्ममार्ग आचरण का वह मार्ग है जिसके द्वारा सेवा के लिए उत्सुक व्यक्ति अपने लक्ष्य तक पहुँच सकता है। गीता का कहना है कि कर्म ही के द्वारा हमारा समस्त संसार के साथ सम्बन्ध स्थिर होता है। कर्म से विमुख होना न धर्म है न मनुष्यत्व, कर्म कर्तव्य है। मनुष्य का भाग्य उसके कर्म पर आधृत है। कर्म से कोई भाग नहीं सकता प्रकृति दिन-रात अपने कर्म में लगी है। पूरा जीवन और पूर्ण संसार ही कर्मस्थल है जिस शुद्ध कर्म को करना आवश्यक हो जाए उसे न करना ही पाप है। गीता में बताया गया है कि उचित कर्म या सदाचरण से ही ईश्वर की प्राप्ति हो सकती है। शुभ कर्म वही है जिससे पूर्णता की प्राप्ति हो, जिससे मनुष्य जगत और ईश्वर की एकता का ज्ञान हो जिस कर्म का आधार असत्य और अवास्तविक पदार्थ है, वह कर्म अशुभ है। ईश्वर स्वयं कर्मठ है इसलि

ईश्वर तक पहुँचने के लिए कर्म-मार्ग अत्यन्त ही आवश्यक है।

भगवान ने गीता में बतलाया है कि सभी वर्णों के कार्य निश्चित हैं, ये निश्चित कर्म ही उनके स्वकर्म कहे जाते हैं। मनुष्य को न चाहने पर भी इन्हीं स्वकर्म करना पड़ता है। अतः कर्मयोगी के लिए स्वकर्म ही स्वधर्म का आचरण है। क्षात्र-तेज से सम्पन्न क्षत्रिय अर्जुन के लिए युद्ध धर्म है।

कर्म दो प्रकार के होते हैं —
(i) सकाम और (ii) निष्काम।

1. सकाम कर्म :— हम किसी कामना या इच्छा से प्रेरित होकर जो शारीरिक या मानसिक कर्म करते हैं। यही सकाम कर्म कहा जाता है। जैसे - स्त्री, पुत्र - धन आदि सभी के लिए किये गये कर्म सकाम हैं हम कामना से प्रेरित हो या फलकांक्षा के वशीभूत हो कर्म करते हैं तथा उसका शुभ या अशुभ फल भोगते हैं। पुनः कामना से आक्रान्त हो कर्म करते हैं और फल भोगते हैं। इस प्रकार कर्म की अनवरत धारा चलती रहती है। इस कर्म बन्धन के कारण ही हम नानायोनियों में भ्रमण करते रहते हैं। श्वेताश्वतर उपनिषद में इसी सकाम कर्म को नाना योनियों में भ्रमण करने का मूल कारण बतलाया गया है। सकाम कर्म बन्धक का जनक है।

(2) निष्काम कर्म :— निष्काम कर्म में कामनाओं का सर्वथा

अभाव रहता है। इन कर्मों से बन्धन नहीं होता, क्योंकि बन्धन के मूल कारण कामना का नितान्त अभाव रहता है। निष्काम कर्म तृष्णा-रहित कर्म है। तृष्णा के अभाव में मनुष्य कर्म करते हुए कर्म-फल का कारण नहीं बनता।

निष्काम कर्म के दो अंग हैं:

(I) कर्तापन या ममता का त्याग।

(II) आसक्ति या तृष्णा का त्याग।

किसी भी कायिक या मानसिक कर्म में कर्तृत्व का अभाव और कामना का अभाव यदि रहे तो वह कर्म निष्काम या अनासक्त कर्म कहलाता है। जिस प्रकार भूने हुए बीज में वपन शक्ति नहीं होती उसी प्रकार राग द्वेष से रहित कर्म में बन्धन की शक्ति नहीं होती है। इस प्रकार के कर्म को करता हुआ भी मनुष्य अकर्ता है, क्योंकि इन कर्मों में फलोत्पादिका शक्ति नहीं होती।

यहाँ पर प्रश्न उठता है कि यदि हममें कोई कामना ही नहीं तो हम कर्म क्यों करें? हम कोई निष्प्रयोजन कर्म तो नहीं कर सकते। अतः निष्काम कर्म तो मनोवैज्ञानिक दृष्टि से असम्भव है। निष्काम कर्म के दो अंग हैं कर्तापन और आसक्ति। इन दोनों का अभाव असम्भव है। अतः निष्काम कर्म भी असम्भव है।

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान कृष्ण ने कहा है कि कर्तापन का अभाव तभी हो सकता है जब मनुष्य समझे कि कर्म तो प्रकृति के गुणों द्वारा

होते जाते हैं। अतः ज्ञानी गुणफल सभी कर्मों को प्रकृति के गुणों द्वारा ही कृत मानता है। प्रकृति के तीन गुण हैं: सत्व, रज और तम। इन तीनों से ही मन, बुद्धि, अहंकार, श्रोत्रादि दस इन्द्रियाँ और शब्दादि पाँच विषय उत्पन्न होते हैं। इन गुणों के कारण ही अन्तःकरण और इन्द्रियों का विषय ग्रहण करना आदि कार्य होते हैं। बुद्धि विषयों का निश्चय करती है, मन मनन करता है, कान सुनता है, आँखें देखती हैं इत्यादि। सभी कार्य गुणों के द्वारा ही सम्पादित किये जाते हैं। ज्ञानी तो यही समझता है परन्तु अज्ञानी अपने को कर्मों का कर्ता मानता है। मैं निश्चय करता हूँ, मैं देखता हूँ, सुनता हूँ आदि। यथार्थ में निश्चय करना, देखना, सुनना आदि सभी प्रकृति प्रसूत हैं। अतः मनुष्य में कर्तापन का अभिमान केवल अज्ञान ही है।

आसक्ति के त्याग के लिए ईश्वर ने बतलाया है कि कर्म को ईश्वरार्पण करना या भगवदर्थ कर्म करना। भगवदर्थ-कर्म में ममता अवश्य होगी परन्तु भगवदर्थ कर्म में आसक्ति का सर्वथा अभाव होगा: यह सब कुछ भगवान का है, मैं भगवान का हूँ, मेरे द्वारा जो कर्म होते हैं वे सभी भगवान के ही हैं। इस प्रकार की भावना से, भगवान की आज्ञा से भगवान की ही प्रसन्नता के लिए शास्त्रविहित कर्म किये जाते हैं।

गीता हमें आदेश करती है कि हम इस प्रकार कर्म करें कि कर्म हमें बन्धन में न जकड़ सकें। स्वयं प्रभु भी मनुष्य जाति के लिए कर्म करते हैं। यद्यपि परमात्मा सभी दृष्टिकोण से स्वात्मनिर्भर तथा इच्छारहित हैं तो भी उन्हें संसार में कुछ न कुछ कार्य सम्पन्न करना ही होता है। इसीलिए अर्जुन को आदेश दिया गया कि युद्ध करो और अपने कर्त्तव्य का पालन करो। मुक्त आत्माओं का भी यह कर्त्तव्य है कि वे दूसरों को अपने अन्तःस्थित दैवीय शक्ति की खोज करने में सहायता करें। मनुष्य-जाति की सेवा ही ईश्वर की उपासना है। निष्काम भाव से तथा विदेह वृत्ति से संसार एवं ईश्वर के निमित्त किया गया कर्म-बन्धन का कारण नहीं होता।

गीता का आदेश है कि हमें साधारण जीवन के व्यवहार से घृणा नहीं करनी चाहिए, किन्तु सब स्वार्थमय इच्छाओं का दमन करना आवश्यक है। निष्काम कर्म का अर्थ कुछ लोग काम्यकर्मों का त्याग समझते हैं। जैसे — स्त्री पुत्र धन आदि के लिए यज्ञ, दान, तप आदि काम्य कर्म हैं। इनका त्याग ही काम्य कर्म का त्याग है। कुछ लोग निष्काम कर्म से निषिद्ध कर्मों का त्याग समझते हैं, जैसे — चोरी, झूठ, व्यभिचार आदि कर्मों को न करना। परन्तु गीता में निष्काम कर्म का अर्थ है संसार के सभी कर्मों में ममता आसक्ति का सर्वथा त्याग। यही त्याग निष्काम कर्म का आदर्श है।

निष्काम - कर्म में कर्मों का त्याग नहीं किया जाता केवल कर्मफल का त्याग किया जाता है। इस प्रकार निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि निष्काम कर्म ईश्वरार्थ कर्म है। ईश्वरार्थ - कर्म ही अनासक्त कर्म है। अनासक्त कर्म ही परमात्मा तक पहुँचने का मार्ग है। निष्काम - कर्म करके मनुष्य संसार बन्धन को काट डालता है। जन्म और मरण के चक्र को पारकर जाता है तथा परमात्मा से मिल जाता है।

अतः कर्मयोग ईश्वर से मिलने का साधन या मार्ग है कर्मयोग या निष्काम कर्म का आचरण मोक्ष - मार्ग है जनक आदि राजर्षियों ने निष्काम - कर्मयोग से ही सिद्धि - लाभ किया। इससे स्पष्ट है कि निष्काम - कर्म या कर्मयोग मोक्ष का साधन है। निष्काम - कर्म का आचरण स्वकर्म है और स्वकर्म ही स्वधर्म है। इस स्वकर्म के आचरण से मानव को सिद्धि प्राप्त होती है (स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धि लभते नरः।

अतः स्वाभाविक कर्म का अनुष्ठान ही कर्मयोग है, यही कामना सहित कर्मानुष्ठान है। इस अनुष्ठान से ही मानव को शान्ति और सिद्धि मिलती है।

कर्म करने के लिए प्रेरणा की आवश्यकता होती है प्रेरणा साधारणतः अर्थ हुआ करता है और साधारणतः व्यक्ति राग और द्वेष

से प्रेरित होकर ही कर्म किया करता है। परन्तु यही एकमात्र प्रेरणा के स्रोत नहीं हैं। कर्तव्य की भावना भी कर्म के लिए प्रेरणा देती है। इति कर्तव्यता बोध यह मेरा कर्तव्य है। यह मेरा कर्म है यह भावना भी कर्म के लिए प्रेरित करती है। जहाँ कर्म कर्तव्य की भावना से प्रेरित होकर की जाती है वहाँ फल प्रमुख नहीं होता एवं कर्मफल प्राप्ति की इच्छा से नहीं किये जाते ऐसे कर्म इसलिए किये जाते हैं क्योंकि वह व्यक्ति का कर्तव्य है, इसमें लगता है कि बिना फल को ध्यान में रखे हुए भी कर्म किये जा सकते हैं।

गीता की तरह कांट ने भी कर्तव्य कर्तव्य के लिए करने का आदेश दिया है। Duty for duty sake का अर्थ है कि मानव को मानव को कर्तव्य करते समय कर्तव्य के लिए तत्पर रहना चाहिए। कर्तव्य करते समय फल की आशा का भाव छोड़ देना चाहिए कांट और गीता के मत में समरूपता यह है कि दोनों ने लोक कल्याण को ही कर्म का आधार माना है। कांट और गीता के मत में प्रमुख भिन्नता यह है कि कांट ने इन्द्रिय का दमन करने का आदेश दिया है पर गीता इसके विपरीत इन्द्रिय को बुद्धि के मार्ग पर नियंत्रण करने का आदेश देती है। गीता में इन्द्रियों को दमन करने वाले को पापी कहा गया है। गीता और कांट के मत में दूसरी भिन्नता यह है गीता में मोक्ष को श्रेष्ठ माना गया है जिसकी प्राप्ति में नैतिकता

December '19

M	T	W	T	F	S	S
30	31					1
2	3	4	5	6	7	8
9	10	11	12	13	14	15
16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	29

January '20

M	T	W	T	F	S	S
		1	2	3	4	5
6	7	8	9	10	11	12
13	14	15	16	17	18	19
20	21	22	23	24	25	26
27	28	29	30	31		

APPOINTMENTS / MEETINGS

महानता है जबकि कांट ने नैतिक नियम को ही एकमात्र आदर्श माना है।

गीता में कर्म, अकर्म और निष्काम का विस्तृत विवरण देकर निष्काम कर्म की महत्ता प्रतिपादित की गयी है। गीता में कर्म और सन्यास का योग है। गीता पलायनवाद या कर्मकाण्ड को नहीं मानती। इसमें कर्म और वैराग्य, प्रवृत्ति और निवृत्ति, ज्ञान और भक्ति का सामन्जस्य है। गीता स्वधर्म, विश्व-बन्धुत्व और अनासक्ति की प्रचारिका है। आज के आणविक युग में गीता की महत्ता स्वयं सिद्ध है।